सामान्य हिन्दी

3. शब्द–विचार

♦ शब्द:

प्रयोग–योग्य, एकार्थ–बोधक तथा परस्पर अन्वित वर्णों के समूह को शब्द कहते हैं। दूसरे शब्दों में एक या अनेक वर्णों के मेल से निर्मित स्वतंत्र एवं सार्थक ध्वनि ही शब्द कहलाती है। जैसे – एक वर्ण से निर्मित शब्द—न (नहीं) व (और), अनेक वर्णो से निर्मित शब्द—कुत्ता, शेर, कमल, नयन, प्रासाद, सर्वव्यापी, परमात्मा, बालक, कागज, कलम आदि।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है तथा वह समाज में भाषा के माध्यम से परस्पर विचार–विनिमय करता है। इस प्रक्रिया में जो वाक्य प्रयुक्त हैं, उनमें सार्थक शब्दों का प्रयोग करता है। शब्द किसी भाषा के प्राण हैं। बिना शब्दों के भाषा की कल्पना करना असंभव है। शब्द भाषा की एक स्वतंत्र एवं सार्थक इकाई है, जो एक निश्चित अर्थ का बोध कराती है।

♦ शब्द–भेद:

हिन्दी भाषा, विकास की दीर्घ परम्परा और अनेक भाषाओं के सम्पर्क का परिणाम है। फलतः हिन्दी शब्दावली का वर्गीकरण अनेक आधारों पर किया जाता है, जो इस प्रकार है –

♦ विकास (स्रोत) के आधार पर शब्द–भेद:

प्रत्येक भाषा का विकास निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसमें भाषा के नये–नये शब्दों का निर्माण होता रहता है। हिन्दी भाषा में विकास के आधार पर शब्दों को छः वर्गों में विभाजित किया जाता है –

(1) तत्सम् शब्द –

हिन्दी भाषा का उद्भव संस्कृत से माना जाता है; इस कारण हिन्दी में संस्कृत के कुछ शब्द मूल रूप के समान प्रयुक्त होते हैं और इनके सहयोग से अनेक शब्दों का निर्माण किया जाता है।

जो शब्द संस्कृत से हिन्दी में बिना परिवर्तन किये अपना लिये जाते हैं, उन्हें तत्सम् शब्द कहते हैं। 'तत्' का आशय 'उसके' और 'सम्' का आशय 'समान' है। इस प्रकार जो शब्द संस्कृत के समान होते हैं या जो शब्द बिना विकृत हुए संस्कृत से ज्यों के त्यों हिन्दी भाषा में आ गये हैं, वे तत्सम् शब्द होते हैं। जैसे – भानु, प्राण, कर्म, अग्नि, कोटि, हस्त, मस्तक, यौवन, शृंगार, ज्ञान, वायु, अश्रु, ग्रीवा, दीपक आदि।

(2) तद्भव शब्द –

जो शब्द संस्कृत से उत्पन्न या विकसित हुए हैं या संस्कृत से विकृत होकर हिन्दी में प्रयुक्त किये जाते हैं, उन्हें तद्भव शब्द कहते हैं। इस वर्ग में वे शब्द आते हैं जो संस्कृत भाषा से पालि, प्राकृत, एवं अपभ्रंश के माध्यम से अपना पूरा मार्ग तय करके आये हैं। जैसे – काम, आग, कबूतर, हाथ, साँप, माँ, भाई, घी, दूध, भैंस, खाट, थाली, सुई, पानी, थन, चून, आँसू, गर्दन, आँवला, गर्मी आदि।

♦ तत्सम — तद्भव

अंक – आँक
अंगरक्षक – अँगरखा
अंगुलि – अँगुली
अक्षर – अच्छर
अक्षत – अच्छत
अक्षय तृतीया – आखातीज
अंगुष्ट – अँगूठा
अक्षि – आँख
अकार्य – अकाज
अखिल – आखा
अग्नि – आग
अगम्य – अगम
अग्रवर्ती – अगाड़ी
अज्ञान – अजान
अज्ञानी – अनजाना
अट्टालिका – अटारी
अमावस्या – अमावस
अष्ट – आठ
अष्टादश – अठारह
अद्य – आज
अर्द्ध – आधा
अनार्य – अनाड़ी
अन्नाद्य – अनाज
अन्धकार – अँधेरा
अर्क – आक
अमृत – अमिय
अमूल्य – अमोल
अन्यत्र – अनत
अश्रु – आँसू
अम्बा – अम्मा
अम्लिका – इमली
अशीति – अस्सी
आखेट – अहेर
आम्र – आम
आमलक – आँवला
आम्रचूर्ण – अमचूर
आभीर – अहीर

आदेश – आयुस
आलस्य – आलस
आश्रय – आसरा
आश्चर्य – अजरज
आश्विन – आसोज
आशिष् – असीस
इक्षु – ईख
इष्टिका – ईंट
उच्च – ऊँचा
उज्ज्वल – उजला
उत्साह – उछाह
उद्वर्तन – उबटन
उपालम्भ – उलाहना
उपाध्याय – ओझा
उलूक – उल्लू
उलूखल – ओखली
ऊष्ण – उमस
ऋक्ष – रीछ
ओष्ठ – ओँठ
ॐ – ओम
कंकण – कंगन
कंटक – कांटा
क्षत्रिय – खत्री
क्षार – खार
क्षेत्र – खेत
क्षीर – खीर
क्षति – छति
क्षण – छिन
क्षीण – छीन
कच्छप – कछुआ
कज्जल – काजल
कदली – केला
कर्पूर – कपूर
कृपा – किरपा
कर्त्तरी – कैँची
कर्ण – कान
कृषक – किसान
कर्तव्य – करतब
कटु – कडुआ
कर्तन – कतरन
कल्लोल – कलोल
क्लेश – कलेश
कर्म – काम
कृष्ण – कान्हा
कपर्दिका – कौड़ी
कपोत – कबूतर
काक – कौआ
कार्य – कारज, काज
कार्तिक – कातिक
कास – खाँसी
काष्ठ – काठ
किँचित – कुछ
किरण – किरन
कुक्कुर – कुत्ता
कुक्षि – कोख
कुपुत्र – कपूत
कुंभकार – कुम्हार
कुमार – कुँअर
कुष्ठ – कोढ़
कूप – कुँआ
कोकिला – कोयल
कोण – कोना
कोष्ठिका – कोठी
खनि – खान
खटवा – खट
गंभीर – गहरा
गर्दभ – गधा
गर्त – गड्ढा
ग्रंथि – गाँठ
गृद्ध – गिद्ध
गृह – घर
गर्भिणी – गाभिन
ग्रहण – गहन
गहन – घना
गात्र – गात

गायक – गवैया
ग्राहक – गाहक
ग्राम – गाँव
ग्रामीण – गँवार
गुहा – गुफा
गेंदुक – गेंद
गोधूम – गेहूँ
गोपालक – ग्वाला
गोमय – गोबर
गोस्वामी – गुसाईँ
गौ – गाय
गौत्र – गोत
गौर – गोरा
घंटिका – घंटी
घट – घड़ा
घृणा – घिन
घृत – घी
चंचु – चोंच
चंद्र – चाँद
चुंबन – चूमना
चंद्रिका – चाँदनी
चक्र – चाक
चक्रवाहक – चकवा
चतुर्थ – चौथा
चतुर्दश – चौदह
चतुष्कोण – चौकोर
चतुष्पद – चौपाया
चतुर्विंश – चौबीस
चर्म – चाम, चमड़ी
चर्वण – चबाना
चिक्कण – चिकना
चित्रक – चीता
चित्रकार – चितेरा
चूर्ण – चून
चैत्र – चैत
चौर – चोर
छत्र – छाता
छाया – छाँह
छिद्र – छेद
जंघा – जाँघ
जन्म – जनम
ज्योति – जोत
जव – जौ
जामाता – जँवाई
ज्येष्ठ – जेठ
जिह्वा – जीभ
जीर्ण – झीना
झरण – झरना
तुंद – तोंद
तुंल – तंदुल
तप्त – तपन
तपस्वी – तपसी
त्वरित – तुरंत
त्रय – तीन
त्रयोदश – तेरह
तृण – तिनका
ताम्र – तांबा
तिलक – टीका
तीक्ष्ण – तीखा
तीर्थ – तीरथ
तैल – तेल
दंत – दाँत
दंतधावन – दातुन
दक्ष – दच्छ
दक्षिण – दाहिना
दधि – दही
दद्रु – दाद
दृष्टि – दीठि
द्वादश – बारह
द्वितीय – दूजा
द्विपट – दुपट्टा
द्विवेदी – दुबे
द्विप्रहरी – दुपहरी
दिशांतर – दिशावर
दीप – दीया

दीपश्लाका – दीयासलाई
दीपावली – दिवाली
दुःख – दुख
दुग्ध – दूध
दुर्बल – दुबला
दूर्वा – दूब
दैव – दई
द्वौ – दो
धर्म – धरम
धत्तूर – धतूरा
धनश्रेष्ठी – धन्नासेठ
धरित्री – धरती
धान्य – धान
धुर् – धुर
धूलि – धूल
धूम्र – धुँआ
धैर्य – धीरज
नक्षत्र – नखत
नग्न – नंगा
नकुल – नेवला
नव्य – नया
नप्तृ – नाती
नृत्य – नाच
नयन – नैन
नव – नौ
नापित – नाई
नारिकेल – नारियल
नासिका – नाक
निद्रा – नींद
निम्ब – नीम
निर्वाह – निबाह
निष्ठुर – निठुर
नौका – नाव
पंक्ति – पंगत
पंचम – पाँच
पंचदश – पन्द्रह
पक्व – पका
पक्वान्न – पकवान
पक्ष – पंख
पथ – पंथ
पत्र – पत्ता
पक्षी – पंछी
पट्टिका – पाटी
पर्पट – पापड़
परश्वः – परसों
परशु – फरसा
पवन – पौन
परीक्षा – परख
पर्यँक – पलंग
पश्चाताप – पछतावा
प्रकट – प्रगट
प्रस्तर – पत्थर
प्रहर – पहर
प्रहरी – पहरेदार
प्रतिच्छाया – परछाँई
पृष्ठ – पीठ
पाद – पैर
पानीय – पानी
पाषाण – पाहन
पितृ – पितर
प्रिय – पिय
पिपासा – प्यास
पिपीलिका – चिँटी
पीत – पीला
पुच्छ – पूँछ
पुत्र – पूत
पुष्कर – पोखर
पूर्ण – पूरा
पूर्णिमा – पूनम
पूर्व – पूरब
पौत्र – पोता
पौष – पौ
फाल्गुन – फागुन
फुल्ल – फुल्का
बंध – बाँध

बंध्या – बाँझ
बर्कर – बकरा
बधिर – बहर
बलिवर्ध – बैल
बालुका – बालू
बुभुक्षित – भूखा
भक्त – भगत
भगिनी – बहन
भद्र – भला
भल्लुक – भालू
भ्रमर – भौंरा
भस्म – भस्मि
भागिनेय – भानजा
भ्राता – भाई
भ्रातृजाया – भौजाई
भ्रातृजा – भतीजी
भाद्रपद – भादो
भिक्षुक – भिखारी
भिक्षा – भीख
भ्रू – भौंहि, भौं
मकर – मगर
मक्षिका – मक्खी
मर्कटी – मकड़ी
मणिकार – मनिहार
मनीचिका – मिर्च
मयूर – मोर
मल – मैल
मशक – मच्छर
मशकहरी – मसहरी
मार्ग – मारग
मातुल – मामा
मास – महीना
मित्र – मीत
मिष्ठान्न – मिठाई/मिष्ठान
मुख – मुँह
मुषल – मूसल
मूत्र – पेशाब
मृत्यु – मौत
मृतघट – मरघट
मृत्तिका – मिट्टी
मेघ – मेह
मौक्तिक – मोती
यंत्र-मंत्र – जंतर-मंतर
यज्ञ – जग
यज्ञोपवीत – जनेऊ
यजमान – जजमान
यति – जती
यम – जम
यमुना – जमुना
यश – जस
यशोदा – जशोदा
यव – जौ
युक्ति – जुगत
युवा – जवान
यूथ – जत्था
योग – जोग
योगी – जोगी
यौवन – जोबन
रक्षा – राखी
रज्जु – रस्सी
राजपुत्र – राजपूत
राज्ञी – रानी
रात्रि – रात
राशि – रास
रिक्त – रीता
रुदन – रोना
रूष्ट – रूठा
लक्ष – लाख
लक्षण – लक्खन/लच्छन
लक्ष्मण – लखन
लज्जा – लाज
लवंग – लौंग
लवण – नौन/लूण
लवणता – लुनाई
लेपन – लीपना

लोमशा – लोमड़ी
लौह – लोहा
लौहकार – लुहार
वंश – बाँस
वंशी – बाँसुरी
वक्र – बगुला
वज्रांग – बजरंग
वट – बड़
वर्ण – वरन
वणिक – बनिया
वत्स – बछड़ा/बेटा
वधू – बहू
वरयात्रा – बारात
व्याघ्र – बाघ
वाणी – बैन
वानर – बंदर
वार्ताक – बैंगन
वाष्प – भाप
विँश – बीस
विकार – बिगाड़
विवाह – ब्याह
विष्ठा – बींट
वीणा – बीना
वीरवर्णिनी – बीरबानी
वृद्ध – बुड्ढा
वृश्चिक – बिच्छू
श्मश्रु – मूँछ
श्मशान – मसान
श्याली – साली
श्यामल – साँवला
श्वसुर – ससुर
श्वश्रू – सास
श्वास – साँस
शकट – छकड़ा
शत – सौ
शय्या – सेज
शर्करा – शक्कर
श्रावण – सावन
शाक – साग
शाप – श्राप
शृंग – सींग
शिशिंपा – सरसों
शिक्षा – सीख
शुक – सुआ
शुण्ड – सूँड
शुष्क – सूखा
शूकर – सुअर
शून्य – सूना
शृंगार – सिँगार
श्रेष्ठी – सेठ
संधि – सेँध
सत्य – सच
सप्त – सात
सप्तशती – सतसई
सर्प – साँप
सपत्नी – सौत
ससर्प – सरसों
स्कंध – कंधा
स्तन – थन
स्तम्भ – खम्भा
स्वजन – सजन/साजन
स्वप्न – सपना
स्वर्ण – सोना
स्वर्णकार – सुनार
सरोवर – सरवर
साक्षी – साखी
सूत्र – सूत
सूर्य – सूरज
सौभाग्य – सुहाग
हंडी – हाँड़ी
हट्ट – हाट
हर्ष – हरख
हरित – हरा
हरिद्रा – हल्दी
हस्तिनी – हथिनी

हस्त – हाथ
हस्ति – हाथी
हृदय – हिय
हास्य – हँसी
हिँदोला – हिँडोला
होलिका – होली

(3) अर्द्धतत्सम् शब्द –
'अर्द्धतत्सम्' वे शब्द होते हैं, जो संस्कृत शब्दों से व्युत्पन्न या विकसित होकर सीधे ही हिन्दी भाषा में आ गये हैं। इन्हें मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा परिवार में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, फलतः इनके रूप में इतना परिवर्तन नहीं आया, जितना तद्भव शब्दों के रूप में आया। उधर इनका रूप वैसा भी नहीं रह पाया जैसे तत्सम् शब्दों का रहा, इसलिए इन्हें न तत्सम् कहा जाता है और न तद्भव, इन्हें 'अर्द्धतत्सम्' की संज्ञा दी गई है। इनकी संख्या अधिक नहीं है। जैसे –
अगिन, असमान, आँगन, आखर, कारज, किरिपा, किशुन, किसन, चंदर, चूरन, तन, तोल, बरस, भूख, मउर, लगन, लासा, लिछमन, लिछमी, वच्छ, समान।

(4) देशी या देशज शब्द –
जो शब्द स्थानीय आधार पर या ध्वनि के अनुसार गढ़ लिए जाते हैं उन्हें देशी या देशज शब्द कहते हैं। जैसे – पेड़, झगड़ा, चीलगाड़ी आदि।

ज्यादातर देशी और देशज, इन दोनों शब्दों में अन्तर नहीं किया जाता है। पर दोनों शुद्ध एक–दूसरे के पर्याय नहीं हैं। इनके अन्तर को समझ लेना आवश्यक है। 'देशी' शब्द का प्रयोग संस्कृत काल से चला आ रहा है। जिनका अर्थ है, वे शब्द जिन्हें संस्कृत व्याकरण के नियमों से सिद्ध नहीं किया जा सके। कुछ आदिवासियों की भाषा के जो आर्यों के आगमन के समय भारत में निवास करते थे। इनमें से आस्ट्रिक जैसे कबीले तो आर्यों के आगमन से आस्ट्रेलिया एवं इण्डोनेशिया की ओर चले गये। कुछ काल कवलित हो गये और कुछ आर्यों में घुल–मिल गये। भाषा में इनका अन्तर्मिश्रण संस्कृत काल से ही प्रारम्भ हो गया था। पालि, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में तो इनकी पर्याप्त बहुलता पाई जाती है। इसलिए हेमचन्द्र को 'देशी' नाम माला कोष में लिखना पड़ा। दूसरी ओर 'देशज' शब्द उन्हें कहा जाना चाहिए, जिनका निर्माण विभिन्न भाषा–भाषी लोगों ने अपनी आवश्यकतानुसार अनुकरण के आधार पर अथवा अन्य प्रकार से कर लिया है। इनको इस आधार पर एक वर्ग में रखा गया है कि दोनों की ही व्युत्पत्ति संधिग्ध है। किसी भी ज्ञात देशीय या विदेशीय भाषा के आधार पर इन्हें व्युत्पन्न नहीं किया जा सकता है।

♦ देशज शब्द :
चिड़िया, डाब, ढोलक, ओढ़ना, बाल, खाल, छोटा, घघरी, पाग, पेँट, झाड़ी, जाँटी, बेटी, तरकारी, आला, भोँपू, चीलगाड़ी, फटफटिया, टेँ–टेँ, चेँ–चेँ, पोँ–पोँ, मेँ–मेँ, टप–टप, झर–झर, कल–कल, धड़ा–धड़, झल–मल, झप–झप, अण्टा, तेँदुआ, ठुमरी, फुनगी, खिचड़ी, बियाना, ठेठ, गाड़ी, थैला, खटखटाना, ढूँढना, मूँगा, खोँपा, झुग्गी, लुटिया, चुटिया, खटिया, लोटा, सरपट, खर्राटा, चाँद, चुटकी, लौकी, ठठेरा, पटाखा, खुरपी, कटोरा, केला, बाजरा, ताला, लुंगी, जूता, बछिया, मेल–जोल, सटकना, डिबिया, पेट, कलाई, भोँदू, चिकना, खाट, लड़का, छोरा, दाल, रोटी, कपड़ा, भाण्डा, लत्ते, छकड़ा, खिड़की, झाड़ू, झोला, पगड़ी, पड़ोसी, खचाखच, कोड़ी, भिण्डी, कपास, परवल, सरसोँ, काँच, इडली, डोसा, उटपटांग, खटपट, चाट, चुस्की, साग, लूण, मिर्च, पेड़, धब्बा, कबड्डी, झगड़ा आदि।

(5) विदेशी शब्द –
विदेशी भाषाओं से आये तत्सम् एवं तद्भव शब्द इस वर्ग में रखे जाते है। दूसरे 'विदेशी' या विदेश शब्द का अर्थ भारतीय आर्य परिवार से भिन्न भाषाएँ लिया जाना चाहिए, क्योंकि हिन्दी में द्रविड़ परिवार की भाषाओं के शब्द भी मिलते हैं, किन्तु द्रविड़ भाषाओं को विदेशी भाषा नहीं कहा जा सकता है। इसलिए विदेशी भाषा का 'देश से बाहर की भाषा' अर्थ लेने से अव्यप्ति दोष आ जाएगा। हिन्दी भाषा अपने उद्भव से लेकर आज तक अनेक भाषाओं के सम्पर्क में आयी जिनमें से प्रमुख हैं—अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी, पुर्तगाली व फ्रेँच।

♦ अरबी शब्द :
गरीब, मालिक, कैदी, औरत, रिश्वत, कलम, अमीर, औलाद, दिमाग, तरक्की, तरफ, तकिया, जालिम, जलसा, जनाब, जुलूस, खबर, कायदा, शराब, हमला, हाकिम, हक, हिसाब, मतलब, कसरत, कसर, कसूर, उम्र, ईमानदार, इलाज, इमारत, ईनाम, आदत, आखिर, मशहूर, मौलवी, मुहावरा, मदद, फायदा, नशा, तमीज, तबियत, तबला, तबादला, तमाम, दावत, आम, फकीर, अजब, अजीब, अखबार, असर, अल्ला, किस्मत, खत, जिक्र, तजुरबा, दुनिया, बहस, मुकदमा, वकील, हमला, अहमक, ईमान, किस्त, खत्म, जवाब, तादाद, दिन, दुकान, दलाल, बाज, फैसला, मामूली, मालूम, मुन्सिफ, मजमून, वहम, लायक, वारीस, हाशिया, हाल, हाजिर, अदा, आसार, आदमी, औसत, कीमत, कुर्सी, जिस्म, तमाशा, तारीफ, तकदीर, तकाजा, तमाम, एहसान, किस्सा, किला, खिदमत, दाखिल, दौलत, बाकी, मुल्क, यतीम, लफ्ज, लिहाज, हौसला, हवालात, मौसम, मौका, कदम, इजलास, नकल, नहर, मुसाफिर, कब्र, इज्जत, इमारत, कमाल, ख्याल, खराब, तारीख, दुआ, दफ्तर, दवा, मुद्दई, दवाखाना, मौलवी, ताज, मशाल, शेख, इरादा, इशारा, तहसील, हलवाई, नकद, अदालत, लगान, वालिद, खुफिया, कुरान, अरबी, मीनार, खजाना, ऐनक, खत आदि।

♦ फारसी शब्द :
जबर, जोर, जीन, जहर, जंग, माशा, राह, पलंग, दीवार, जान, चश्मा, गोला, किनारा, आफत, आवारा, कमरबंद, गल्ला, चिराग, जागीर, ताजा, नापसन्द, मादा, रोगन, रंग, बेरहम, नाव, तनख्वाह, जादू, चादर, गुम, किशमिश, आमदनी, आराम, अदा, कुश्ती, खूब, खुराक, गोश्त, गुल, ताक, तीर, तेज, दवा, दिल, दिलेर, बेहूदा, बहरा, बेवा, मरहम, मुर्गा, मीन, आतीशबाजी, आबरू, आबदार, अफसोस, कमीना, खुश, खरगोश, खामोश, गुलाब, गुलुबन्द, चाशनी, चेहरा, चूँकि, चरखा, तरकश, जोश, जिगर, जुर्माना, दंगल, दरबार, दुकान, देहात, पैमाना, मोर्चा, मुफ्त, पेशा, पारा, मलीदा, पुल, मजा, पलक, मुर्दा, मलाई, पैदावार, दस्तूर, शादी, वापिस, वर्ना, हजार, हफ्ता, सौदागर, सूद, सरकार, सरदार, लश्कर, सितार, सुर्ख, लगाम, लेकिन, सितारा, चापलूसी, गन्दगी, बर्फ, बीमार, नमूना, नमक, जमींदार, अनार, बाग, जिन्दगी, जनाना, कारखाना, तख्त, बाजार, रोशनदान, चिलम, हुक्का, अमरूद, गवाह, जलेबी, किसमिस, कारीगर, पर्दा, कबूतर, चुगलखोर, शिकार, चापलूसी, चालाक, प्याला, रूमाल, आन, आबरू, आमदनी, अंजाम, अंजुमन, अन्दाज, अगर, अगरचे, अगल, बगल, आफत, आवाज, आईना, किनारा, गर्द, गीला, गिरह, नेहरा, तीन, नाजुक, नापाक, पाजी, परहेज, याद, बेरहम, तबाह, आजमाइश, जल्दी आदि।

♦ अंग्रेजी शब्द :
डाक्टर, टेलीफोन, टैक्स, टेबल, अफसर, कमेटी, एजेन्ट, कमीशन, नर्स, कम्पाउंडर, कालेज, जेल, होल्डर, बॉक्स, गैस, चेयरमैन, अपील, टिकिट, कोर्ट, गिलास, सिनेमा, नम्बर, पैन्सिल, रबर, रजिस्टर, प्रेस, समन, थियटर, डिग्री, बोतल, मील, कैप्टन, पैन, फाउन्टेन, ड्राइवर, डिस्ट्रिक्ट, डिप्टी, ट्यूशन, काउन्सिल, क्रिकेट, क्वार्टर, कम्पनी, एजेन्सी, इयरिँग, इन्टर, इंच, मीटिँग, केम, पाउडर, पैट्रोल, पार्सल, प्लेट, पार्टी, दिसम्बर, थर्मामीटर, ऑफिस, ड्रामा, ट्रक, कैलेण्डर, आंटी, बैग, होमवर्क, मजिस्ट्रेट, पोस्टमैन, कमेटी, कूपन, डबल, कम्पनी, ओवरकोट, कमीशन, फोटो, इंस्पेक्टर, राशन, गार्ड, रेल, लाइन, रिकार्ड, सूटकेस, हाइकोर्ट, मशीन, डायरी, मिनट, रेडियो, स्कूल, हॉस्टल, सर्कस, स्टेशन, फुटबॉल, टॉफी, प्लेटफार्म, टाइप, पाउडर, पास, नोटिस आदि।

♦ तुर्की शब्द :
लफंगा, चिक, चेचक, लाश, कुर्की, मुगल, कुली, कैँची, बहादुर, कज्जाक, बेगम, काबू, तलाश, कालीन, तोप, तमगा, आगा, उर्दू, चमना, जाजिम, चुगुल, सुराग, सौगात, उजबक, चकमक, बावर्ची, मुचलका, गलीचा, चमचा, बुलबुल, दरोगा, चाकू, बारुद, अरमान आदि।

♦ पुर्तगाली शब्द :
तौलिया, तिजोरी, चाबी, गमला, कारतूस, आलपिन, अचार, कमीज, कॉफी, तम्बाकू, साबुन, फीता, किरानी, बाल्टी, आलमारी, अन्नानास, अलकतरा, काजू, मस्तुल, पिस्तौल, नीलाम, गोदाम, किरच, कमरा, कनस्तर, संतरा, पीपा, मिस्त्री, बिस्कुट, परात, बोतल, काज, पपीता, मेज, आलू आदि।

♦ फ्रांसीसी शब्द :
पुलिस, कर्फ्यू, अंग्रेज, इंजन, कारतूस, कूपन, इंजिनियर, रेस्तरां, फिरंगी, फ्रँचाइज, फ्रांस आदि।

♦ यूनानी शब्द :
टेलीफोन, डेल्टा, एटम, टेलीग्राफ आदि।

♦ डच शब्द :
तुरुप, बम।

♦ चीनी शब्द :
चाय, लीची, तूफान आदि।

♦ तिब्बती शब्द :
डांडी।

♦ ग्रीक शब्द :
दाम, सुरंग आदि।

♦ जापानी शब्द :
रिक्शा, झम्पान आदि।

(6) संकर शब्द –
संकर शब्द वे शब्द होते हैं, जो दो भिन्न भाषाओं के शब्दों से मिलकर सामाजिक शब्दों के रूप में निर्मित होते हैं। ये शब्द भी हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। जैसे –
• रेलगाड़ी (अंग्रेजी+हिन्दी),
• बमवर्षा (अंग्रेजी+संस्कृत),
• नमूनार्थ (फारसी+संस्कृत),
• सजाप्राप्त (फारसी+संस्कृत),
• रेलयात्रा (अंग्रेजी+संस्कृत),
• जिलाधीश (अरबी+संस्कृत),
• जेब खर्च (पुर्तगाली+फारसी),
• रामदीन (संस्कृत+फारसी),
• रामगुलाम (संस्कृत+फारसी),
• हैड मुनीम (अंग्रेजी+हिन्दी),
• शादी ब्याह (फारसी+हिन्दी),
• तिमाही (हिन्दी+फारसी)।

♦ व्युत्पत्ति के आधार पर शब्द–भेद :
व्युत्पत्ति (बनावट) एवं रचना के आधार पर शब्दों के तीन भेद किये गये हैं – (1) रूढ़ (2) यौगिक (3) योगरूढ़।
(1) रूढ़ :
जिन शब्दों के खण्ड किये जाने पर उनके खण्डों का कोई अर्थ न निकले, उन शब्दों को 'रूढ़' शब्द कहते हैं। दूसरे शब्दों में, जिन शब्दों के सार्थक खण्ड नहीं किये जा सकें वे रूढ़ शब्द कहलाते हैं। जैसे – 'पानी' एक सार्थक शब्द है , इसके खण्ड करने पर 'पा' और 'नी' का कोई संगत अर्थ नहीं निकलता है। इसी प्रकार रात, दिन, काम, नाम आदि शब्दों के खण्ड किये जाएँ तो 'रा', 'त', 'दि', 'न', 'का', 'म', 'ना', 'म' आदि निरर्थक ध्वनियाँ ही शेष रहेंगी। इनका अलग–अलग कोई अर्थ नहीं है। इसी तरह रोना, खाना, पीना, पान, पैर, हाथ, सिर, कल, चल, घर, कुर्सी, मेज, रोटी, किताब, घास, पशु, देश, लम्बा, छोटा, मोटा, नमक, पल, पेड़, तीर इत्यादि रूढ़ शब्द हैं।

(2) यौगिक :
यौगिक शब्द वे होते हैं, जो दो या अधिक शब्दों के योग से बनते हैं और उनके खण्ड करने पर उन खण्डों के वही अर्थ रहते हैं जो अर्थ वे यौगिक होने पर देते हैं। यथा – पाठशाला, महादेव, प्रयोगशाला, स्नानागृह, देवालय, विद्यालय, घुड़सवार, अनुशासन, दुर्जन, सज्जन आदि शब्द यौगिक हैं। यदि इनके खण्ड किये जाएँ जैसे – 'घुड़सवार' में 'घोड़ा' व 'सवार' दोनों खण्डों का अर्थ है। अतः ये यौगिक शब्द हैं।
यौगिक शब्दों का निर्माण मूल शब्द या धातु में कोई शब्दांश, उपसर्ग, प्रत्यय अथवा दूसरे शब्द मिलाकर संधि या समास की प्रक्रिया से किया जाता है।
उदाहरणार्थ :–
- 'विद्यालय' शब्द 'विद्या' और 'आलय' शब्दों की संधि से बना है तथा इसके दोनों खण्डों का पूरा अर्थ निकलता है।
- 'परोपकार' शब्द 'पर' व 'उपकार' शब्दों की संधि से बना है।
- 'सुयश' शब्द में 'सु' उपसर्ग जुड़ा है।
- 'नेत्रहीन' शब्द में 'नेत्र' में 'हीन' प्रत्यय जुड़ा है।
- 'प्रत्यक्ष' शब्द का निर्माण 'अक्ष' में 'प्रति' उपसर्ग के जुड़ने से हुआ है। यहाँ दोनों खण्डों 'प्रति' तथा 'अक्ष' का पूरा–पूरा अर्थ है।

♦ कुछ यौगिक शब्द हैं:
आगमन, संयोग, पर्यवेक्षण, राष्ट्रपति, गृहमंत्री, प्रधानमंत्री, नम्रता, अन्याय, पाठशाला, अजायबघर, रसोईघर, सब्जीमंडी, पानवाला, मृगराज, अनपढ़, बैलगाड़ी, जलद, जलज, देवदूत, मानवता, अमानवीय, धार्मिक, नमकीन, गैरकानूनी, घुड़साल, आकर्षण, सन्देहास्पद, हास्यास्पद, कौन्तेय, राधेय, दाम्पत्य, टिकाऊ, भार्गव, चतुराई, अनुरूप, अभाव, पूर्वापेक्षा, पराजय, अन्वेषण, सुन्दरता, हरीतिमा, कात्यायन, अधिपति, निषेध, अत्युक्ति, सम्माननीय, आकार, भिक्षुक, दयालु, बहनोई, ननदोई, अपभ्रंश, उज्ज्वल, प्रत्युपकार, छिड़काव, रंगीला, राष्ट्रीय, टकराहट, कुतिया, परमानन्द, मनोहर, तपोबल, कर्मभूमि, मनोनयन, महाराजा।

(3) योगरूढ़ :
जब किसी यौगिक शब्द से किसी रूढ़ अथवा विशेष अर्थ का बोध होता है अथवा जो शब्द यौगिक संज्ञा के समान लगे किन्तु जिन शब्दों के मेल से वह बना है उनके अर्थ का बोध न कराकर, किसी दूसरे ही विशेष अर्थ का बोध कराये तो उसे योगरूढ़ कहते हैं। जैसे –
'जलज' का शाब्दिक अर्थ होता है 'जल से उत्पन्न हुआ'। जल में कई चीजें व जीव जैसे – मछली, मेंढ़क, जोंक, सिंघाड़ा आदि उत्पन्न होते हैं, परन्तु 'जलज' अपने शाब्दिक अर्थ की जगह एक अन्य या विशेष अर्थ में 'कमल' के लिए ही प्रयुक्त होता है। अतः यह योगरूढ़ है।
'पंकज' शाब्दिक अर्थ है 'कीचड़ में उत्पन्न (पंक = कीचड़ तथा ज = उत्पन्न)'। कीचड़ में घास व अन्य वस्तुएँ भी उत्पन्न होती हैं किन्तु 'पंकज' अपने विशेष अर्थ में 'कमल' के लिए ही प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार 'नीरद' का शाब्दिक अर्थ है 'जल देने वाला (नीर = जल, द = देने वाला)' जो कोई भी व्यक्ति, नदी या अन्य कोई भी स्रोत हो सकता है, परन्तु 'नीरद' शब्द केवल बादलों के लिए ही प्रयुक्त करते हैं। इसी तरह 'पीताम्बर' का अर्थ है पीला अम्बर (वस्त्र) धारण करने वाला जो कोई भी हो सकता है, किन्तु 'पीताम्बर' शब्द अपने रूढ़ अर्थ में 'श्रीकृष्ण' के लिए ही प्रयुक्त है।

♦ कुछ योगरूढ़ शब्द :
योगरूढ़ — विशिष्ट अर्थ
कपीश्वर – हनुमान
रतिकांत – कामदेव
मनोज – कामदेव
विश्वामित्र – एक ऋषि
वज्रपाणि – इन्द्र
घनश्याम – श्रीकृष्ण
लम्बोदर – गणेशजी
नीलकंठ – शंकर

चतुरानन – ब्रह्मा
त्रिनेत्र – शंकर
त्रिवेणी – तीर्थराज प्रयाग
चतुर्भुज – ब्रह्मा
दुर्वासा – एक ऋषि
शूलपाणि – शंकर
दिगम्बर – शंकर
वीणापाणि – सरस्वती
षडानन – कार्तिकेय
दशानन – रावण
पद्मासना – लक्ष्मी
पद्मासन – ब्रह्मा
पंचानन – शिव
सहस्त्राक्ष – इन्द्र
वक्रतुण्ड – गणेशजी
मुरारि – श्रीकृष्ण
चक्रधर – विष्णु
गिरिधर – कृष्ण
कलकंठ – कोयल
हलधर – बलराम
षटपद – भौंरा
वीणावादिनी – सरस्वती

♦ अर्थ के आधार पर शब्द–भेद:
अर्थ के आधार पर शब्द दो प्रकार के होते हैं–
1. सार्थक शब्द –
जिन शब्दों का पूरा–पूरा अर्थ समझ में आये, उन्हें सार्थक शब्द कहते हैं। जैसे – कमल, गाय, पक्षी, रोटी, पानी आदि।

2. निरर्थक शब्द –
जिन शब्दों का कोई अर्थ नहीं निकलता, उन्हें निरर्थक शब्द कहते हैं। जैसे – लतफ, ङणमा, वाय, वंडा आदि।

कभी–कभी एक सार्थक शब्द के साथ एक निरर्थक शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे – चाय–वाय, गाय–वाय, रोटी–वोटी, पेन–वेन, पुस्तक–वुस्तक, डंडा–वंडा, पानी–वानी आदि। इन शब्दों में आये हुए दूसरे अकेले शब्द का कोई अर्थ नहीं निकलता। जैसे– गाय के साथ वाय और पेन के साथ वेन आदि। गाय और पेन, शब्दों का अर्थ पूर्ण रूप से समझ में आता है जबकि वाय और वेन शब्दों का अर्थ समझ में नहीं आता। यदि वाय, और वेन को यहाँ से हटा दिया जाये तो भी शब्द के अर्थ पर कोई असर नहीं पड़ेगा परन्तु ये शब्द पहले शब्द के साथ मिलकर एक विशिष्ट अर्थ देते हैं, जो अकेले गाय और पेन नहीं है। जैसे – गाय-वाय का अर्थ, दूध देने वाले पशु से है और पेन-वेन का अर्थ, लिखने के साधन से है।

अर्थ के आधार पर उपर्युक्त प्रकारों के अतिरिक्त शब्दों के निम्नलिखित प्रकार भी हैं–
(1) युग्म समानदर्शी मित्रार्थक शब्द
(2) पर्यायवाची शब्द
(3) अपूर्ण पर्यायवाची शब्द
(4) विलोम शब्द
(5) वाक्य स्थानापन्न शब्द
(6) अनेकार्थक शब्द।

♦ प्रयोग के आधार पर शब्द–भेद:
वाक्य में शब्द का प्रयोग किस रूप में हुआ है, इस आधार पर भी शब्दों का वर्गीकरण किया गया है– (1) नाम (2) आख्यात (3) उपसर्ग (4) निपात। संस्कृत भाषा में पाणिनि ने इनकी पद संज्ञा कर समस्त शब्द–समूह को दो वर्गों में विभाजित किया है– (1) सुबन्त और (2) तिगन्त। सुबन्त से तात्पर्य शब्दों के साथ कारक व्यंजक विभक्तियों का प्रयोग किया जाता है, जिन शब्दों के साथ क्रिया–व्यंजक विभक्तियों का प्रयोग किया जाता है, उन्हें तिगन्त कहा जाता है।

हिन्दी में प्रयोग के आधार पर शब्द के निम्नलिखित आठ भेद हैं–
1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. क्रिया
4. विशेषण
5. क्रिया–विशेषण
6. सम्बन्धबोधक अव्यय
7. समुच्चयबोधक अव्यय
8. विस्मयादिबोधक अव्यय।

♦ रूप विकार के आधार पर शब्द–भेद:
रूप विकार की दृष्टि से शब्दों को दो भागों में विभाजित किया जाता है–
(1) विकारी शब्द –
जिन शब्दों का रूप लिँग, वचन, पुरुष, काल एवं कारक के अनुसार परिवर्तित हो जाता है, वे विकारी शब्द कहलाते हैं। जैसे – लड़का > लड़की – लिँग के कारण, अच्छा > अच्छे, गया > गयी आदि – काल के कारण।
इसमें चार प्रकार के शब्द हैं–
1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. क्रिया
4. विशेषण।

(2) अविकारी शब्द–
अविकारी शब्द वे शब्द हैं जिनका रूप लिँग, वचन, काल, विभक्ति, पुरुष के कारण परिवर्तित नहीं होता। ये शब्द जहाँ भी प्रयुक्त होते हैं, वहाँ एक ही रूप में रहते हैं। ये शब्द अव्ययीभाव समास के उदाहरण कहलाते हैं। जैसे – किन्तु, परन्तु, अन्दर, बाहर, अधीन, इसलिए, यद्यपि, तथापि, कल, परसों, बहुत, शाबास आदि। अविकारी शब्दों के भी चार प्रकार हैं–
(1) क्रिया–विशेषण

(2) समुच्चय बोधक
(3) सम्बन्ध बोधक
(4) विस्मयादिबोधक।

♦ परिस्थिति और प्रयोग के आधार पर शब्द–भेद:

परिस्थिति और प्रयोग की दृष्टि से शब्द के तीन प्रकार होते हैं–

1. वाचक शब्द–

जो शब्द केवल अपने सांकेतिक अर्थ ही प्रदान करते हैं, उन्हें वाचक शब्द कहा जाता है। प्रत्येक शब्द में तत्सम्बद्ध भाषा–भाषी समाज द्वारा किसी न किसी भाव, विचार, वस्तु, स्थान अथवा व्यक्ति का संकेत निहित कर दिया जाता है। जब कोई शब्द केवल उस संकेत का ही बोध कराता है, तब उसे वाचक, सांकेतिक या अभिधेय कहा जाता है। जैसे– राम, पुस्तक, कुर्सी, झुन्झुनूं, लड़का आदि। जब उक्त शब्दों का वाक्यों में वही अर्थ होता है, जो सांकेतिक है, तब इनकी वाचक संज्ञा होगी। यदि कोई मित्र अर्थ प्रदान करेगा तो संज्ञा परिवर्तित हो जायेगी। वाचक शब्द से व्यक्त अर्थ को वाच्यार्थ, मुख्यार्थ या संकेतार्थ कहा जाता है।

2. लक्षक शब्द–

वाच्यार्थ का बोध हो जाने पर जब किसी शब्द का सादृश्य से इतर, मुख्यार्थ से सम्बद्ध कोई अन्य अर्थ ग्रहण किया जाता है, तब उस शब्द को लक्षक और अर्थ को लक्ष्यार्थ कहा जाता है। जैसे– कोई कहता है कि राम गधा है तो वाक्य में प्रयुक्त 'गधा' शब्द के मुख्यार्थ चार पैरों वाला, लम्बे कानों वाला, भारवाही पशु विशेष के लिए होता है, जबकि 'राम' शब्द का प्रयोग एक मनुष्य विशेष के लिए हुआ है। अतः राम शब्द के अर्थ के साथ 'गधा' शब्द के अर्थ की संगति नहीं बैठ रही है। फलतः मुख्यार्थ बोध हो जाने से 'गधा' शब्द का अर्थ 'मूर्खता' से लिया गया है, जो मुख्यार्थ के साथ गुणावगुणी भाव से सम्बन्धित है। अतः यहाँ पर 'गधा' शब्द लक्षक एवं 'मूर्ख' लक्ष्यार्थ है।

3. व्यंजक शब्द–

किसी शब्द के मुख्यार्थ बोध होने पर लक्ष्यार्थ अथवा मुख्यार्थ के पश्चात् किसी चमत्कारपूर्ण अर्थ को ग्रहण किया जाता है, तब उस शब्द की व्यंजक संज्ञा होती है। इस प्रकार व्यंजक शब्द दो प्रकार से व्यंग्यार्थ का बोध कराता है– (1) लक्ष्यार्थ के पश्चात् (2) मुख्यार्थ के पश्चात्। प्रथम का उदाहरण– 'गंगा में घर है।' वाक्य में 'गंगा' शब्द लक्षक और व्यंजक दोनों प्रकार है। पहले 'गंगा' शब्द का सादृश्येतर समीप, सामीप्य भाव सम्बन्ध से 'गंगा का तट' अर्थ लक्ष्यार्थ हुआ। तत्पश्चात् 'शीतल एवं स्वास्थ्यवर्धक स्थल' चमत्कारपूर्ण अर्थ व्यंग्यार्थ होने से 'गंगा' शब्द व्यंजक हो गया। द्वितीय वर्ग का उदाहरण–'सूर्यास्त हो गया है।' वाक्य का मुख्यार्थ के साथ–साथ भोजन पकाने का समय हो गया। पढ़ना बन्द करने का समय हो गया है और भ्रमण का समय हो गया आदि अनेक अर्थों की प्राप्ति होती है। यहाँ पर वे अर्थ बिना मुख्यार्थ बोध के ही प्राप्त हो रहे हैं। अतः यहाँ पर 'सूर्यास्त' शब्द दूसरे प्रकार का व्यंजक शब्द है।

♦ शब्द–रूप:

शब्द भाषा की स्वतंत्र इकाइयाँ हैं। परन्तु इन स्वतंत्र शब्दों को एक–एक करके एक साथ रखने से सार्थक वाक्य नहीं बनते। शब्दों को वाक्यों में प्रयोग करने से पहले उनको 'पद' बनाया जाता है। पद बनाने हेतु स्वतंत्र शब्दों में प्रत्यय, उपसर्ग आदि जोड़े जाते हैं। जैसे– राम बाण रावण मारा, में शब्दों को यथावत् एक साथ रखा गया है परंतु यह सार्थक वाक्य नहीं है। यदि इन शब्दों में हम प्रत्यय, विभक्ति जोड़ दें तो वाक्य बनेगा—राम ने बाण से रावण को मारा। शब्द में परसर्ग, प्रत्यय आदि जोड़ने से 'पद' बनता है। इस प्रकार 'पद' शब्द का वह रूप है जिसे शब्द में प्रत्यय व विभक्तियाँ लगाकर वाक्य में प्रयुक्त होने योग्य बनाया जाता है। अर्थात् शब्द के वाक्य में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न रूप ही 'पद' कहे जाते हैं। पदों को ही शब्द–रूप कहा जाता है। संक्षेप में भाषा के लघुत्तम सार्थक खण्डों को शब्द–रूप कहते हैं।

शब्द–रूप दो प्रकार के होते हैं– (1) संरूप (2) रूपिम। प्रकार एवं प्रयोग की दृष्टि से एक ही शब्द के अनेक शब्द–रूप बनाये जा सकते हैं, जैसे– लड़का, शब्द से लड़का, लड़के, लड़कों आदि तथा पढ़ना शब्द में प्रत्यय लगाकर पढ़ना (शून्य प्रत्यय), पढ़, पढ़ें, पढ़ो, पढ़ा, पढ़िये आदि अनेक शब्द–रूप बनाये जा सकते हैं। शब्द–रूप बनाने की यह प्रक्रिया 'शब्द–रूप निर्माण' कहलाती है। इसे 'शब्द साधन' या 'व्युत्पादन' भी कहते हैं। जब भी शब्दों को वाक्यों में प्रयोग करते हैं, उनमें कोई न कोई प्रत्यय अवश्य जोड़ा जाता है। कई बार शून्य प्रत्यय जोड़कर भी वाक्य बनाया जाता है। जैसे– 'लड़का' में शून्य प्रत्यय जोड़कर वाक्य बनाया– लड़का विद्यालय जाता है।

शब्द–रूप निर्माण प्रक्रिया द्वारा नये शब्दों का निर्माण नहीं होता बल्कि ये तो उसी मूल शब्द के विभिन्न रूप होते हैं, जो वाक्य में अलग–अलग व्याकरणिक कार्य करते हैं।

शब्द–शक्तियाँ

♦ शब्द–शक्ति –

बुद्धि का वह व्यापार या क्रिया जिसके द्वारा किसी शब्द का निश्चयार्थक ज्ञान होता है, अर्थात् अमुक शब्द का निश्चित अर्थ यह है—इस तरह का स्थायी ज्ञान जिस शब्द–व्यापार से मानस में संस्कार रूप में समाविष्ट होता है, उसे शब्द–शक्ति कहते हैं।

वाक्य में सदा सार्थक शब्द का प्रयोग होता है। वाक्य में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द का प्रयोग के अनुसार अर्थ बतलाने वाली वृत्ति को उसकी शक्ति अर्थात् शब्द–शक्ति या शब्द–वृत्ति कहते हैं।

शब्द–शक्ति के द्वारा व्यक्त अर्थ शब्द की परिस्थिति और प्रयोग के अनुसार तीन प्रकार के होते हैं—

1. वाच्यार्थ—शब्द का मुख्य, प्रधान अथवा प्रचलित अर्थ वाच्यार्थ कहलाता है।
2. लक्ष्यार्थ—शब्द का अमुख्य या अप्रधान अर्थ लक्ष्यार्थ कहलाता है।
3. व्यंग्यार्थ—देश–काल एवं प्रसंग के अनुसार लगाया गया अन्यार्थ या प्रतीयमानार्थ व्यंग्यार्थ कहलाता है।

इस तरह तीनों प्रकार के अर्थ प्रकट करने वाली तीन शब्द–शक्तियाँ होती हैं—

(1) अभिधा—वाच्यार्थ को प्रकट करने वाली शब्द–शक्ति
(2) लक्षणा—लक्ष्यार्थ को व्यक्त करने वाली शब्द–शक्ति
(3) व्यंजना—व्यंग्यार्थ को व्यक्त करने वाली शब्द–शक्ति।

1. अभिधा शक्ति –

जिस शक्ति के द्वारा शब्द के साक्षात् संकेतित अर्थ का बोध होता है, उसे अभिधा कहते हैं। साक्षात् संकेतित अर्थ को शब्द का मुख्यार्थ माना जाता है। अतएव शब्द के मुख्य अर्थ का बोध कराने के कारण यह मुख्या, आद्या या प्रथमा शब्द–शक्ति भी कहलाती है।

जब व्याकरण–ज्ञान, उपमान, शब्द–कोश, व्यवहार–प्रयोग तथा विश्वस्त व्यक्ति माता–पिता व गुरुजन आदि के द्वारा बताया जाता है कि अमुक शब्द का अमुक अर्थ है, अथवा इस शब्द का इस अर्थ में प्रयोग किया जाता है, तो उस प्रक्रिया को 'संकेतित अर्थ' कहते हैं। प्रारम्भ में उक्त ज्ञान–विधियों से अवबोध होने पर संकेतित शब्दार्थ का मानस में स्थायी संस्कार बन जाता है। अतः जब–जब कोई शब्द उसके सामने आता है तो तुरन्त ही उसका अर्थ मानस में व्यक्त या उपस्थित हो जाता है। उसे ही मुख्यार्थ, वाच्यार्थ या अभिधेयार्थ कहते हैं। जैसे–

(क) राम पुस्तक पढ़ता है।
(ख) किसान खेत पर हल चलाता है।
(ग) बालक प्रतिदिन विद्यालय जाता है।

अभिधा शक्ति द्वारा जिन शब्दों का अर्थ–बोध होता है, उन्हें 'वाचक' कहा जाता है। इससे अनेकार्थवाची शब्दों के अर्थ का निर्णय किया जाता है। वाचक शब्द तीन प्रकार के होते हैं –

(i) रूढ—जिन शब्दों का विश्लेषण या व्युत्पत्ति सम्भव न हो तथा जिनका अर्थबोध समुदाय–शक्ति द्वारा हो, वे रूढ कहलाते हैं।
(ii) यौगिक—जो शब्द प्रकृति और प्रत्यय के योग से निर्मित हों और उनका विश्लेषण सम्भव हो तथा उनका अर्थबोध प्रकृति–प्रत्यय की शक्ति से हो, वे यौगिक कहलाते हैं।

(iii) योगरुढ—जिन शब्दों की संरचना यौगिक शब्दों के समान होती है तथा अर्थबोध रूढ को समान होता है, उन्हें योगरूढ कहते हैं। तात्पर्य यह है कि जो शब्द प्रकृति एवं प्रत्यय के योग से निर्मित हों, लेकिन अर्थबोध प्रकृति एवं प्रत्यय की शक्ति द्वारा न होकर समुदाय–शक्ति द्वारा हो, वे योगरूढ कहलाते हैं। जैसे– 'जलज' शब्द जल+ज अर्थात् 'जल में उत्पन्न होने वाला' इस प्रकार व्युत्पन्न होता है। यदि इसे यौगिक माना जाये, तो इससे उन सभी वस्तुओं का बोध होगा, जो जल में उत्पन्न होते हैं; जैसे– सीपी, घोंघा, मेंढक, शैवाल आदि। लेकिन 'जलज' शब्द केवल 'कमल' का बोध कराता है और वह अर्थबोध की दृष्टि से रुढ है। ऐसे शब्द योगरूढ कहलाते हैं।

अभिधा शक्ति के द्वारा साक्षात् संकेतित अर्थ का ग्रहण चार प्रकार से होता है –
(1) व्यक्तिवाचक संज्ञा (द्रव्यवाचक)
(2) जातिवाचक संज्ञा
(3) गुणवाचक (विशेषण)
(4) क्रियावाचक।

इन चार प्रकार के शब्दों से संकेतग्रह होने से वाच्यार्थ का बोध होता है।
उदाहरणार्थ—
'खेत में गाय चर रही थी।' इस वाक्य में सीधा–सादा अर्थ समझ में आता है कि खेत में गाय चर रही है।

'लाल घोड़ा सरपट दौड़ रहा था।' इस वाक्य में घोड़े के दौड़ने का अर्थ सहज में प्रकट हो रहा है।

उक्त उदाहरणों में गाय और घोड़ा जातिवाचक संज्ञा हैं, परन्तु उनका आकार भिन्न है। 'चरना' और 'दौड़ना' क्रियाएँ हैं। घोड़े के लिए 'लाल' विशेषण प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार अभिधा शक्ति से शब्द के प्रधान अर्थ अर्थात् वाच्यार्थ का ही ग्रहण होता है।

2. लक्षणा शक्ति –
वाक्य में मुख्यार्थ का बाध होने पर रूढ़ि अथवा प्रयोजन के कारण जिस शक्ति द्वारा मुख्यार्थ से सम्बन्धित अन्य अर्थ या लक्ष्यार्थ ग्रहण किया जाता है, उसे लक्षणा शक्ति कहा जाता है। लक्षणा शब्द–व्यापार साक्षात् संकेतित न होकर आरोपित व्यापार है।
उदाहरण—"रामदीन तो गाय है, उसे मत सताओ।" इस वाक्य में अभिधा से गाय का अर्थ चौपाया पशु होता है, परन्तु रामदीन चौपाया पशु नहीं हो सकता। उस दशा में 'गाय' का मुख्य अर्थ बाधित या छोड़ा जाता है तब उसी मुख्य अर्थ के सहयोग से गाय के स्वभाव (गुण) के अनुरूप "रामदीन अतीव भोला और सरल स्वभाव वाला है"—यह अर्थ ग्रहण किया जाता है। इस तरह लक्षणा से मुख्यार्थ बाधित होता है और उससे सम्बन्धित अन्य अर्थ—लक्ष्यार्थ या लाक्षणिक अर्थ लिया जाता है। इसे आरोपित अर्थ भी कहते है। इसी प्रकार अन्य उदाहरण हैं –
• वह लड़का शेर है।
• यह लड़की तो गाय है।
• राजस्थान वीर है।
• रमेश का घर मुख्य सड़क पर ही है।
• लाल पगड़ी जा रही है।

उपर्युक्त वाक्यों में लड़के को शेर कहने से 'शेर' का अर्थ साहसी या वीर लिया गया है। अतएव उस पर शेर का आरोप किया गया है। लड़की को गाय कहने से 'गाय' का अर्थ सीधी–सरल है। 'राजस्थान' कोई आदमी नहीं है जो वीर हो, अतः राजस्थान का लक्ष्यार्थ राजस्थान–निवासी जन है। रमेश का घर मुख्य सड़क अर्थात् सड़क के मध्य में नहीं हो सकता, अतः मुख्य सड़क के किनारे पर—उससे अत्यन्त निकट अर्थ के लिये ऐसा कहा गया है। 'लाल पगड़ी' स्वयं तो नहीं जा सकती, क्योंकि वह अचेतन है, इसलिए लाल पगड़ी को पहनने वाला व्यक्ति अर्थात् पुलिस वाला जा रहा है। ये सभी अर्थ लक्षणा शक्ति से ही लिये गये हैं।

लक्षणा शक्ति में तीन बाज अथवा तीन कारण या बातें आवश्यक हैं –
(1) मुख्यार्थ का बाध –
जब शब्द के मुख्यार्थ की प्रतीति में कोई प्रत्यक्ष विरोध दिखाई दे तो उसे मुख्यार्थ का बाध कहते हैं। जैसे—"गंगा पर घर है।" इस वाक्य में 'गंगा पर' शब्द का मुख्यार्थ है–गंगा नदी का प्रवाह, लेकिन प्रवाह पर घर नहीं हो सकता, अतः यहाँ मुख्यार्थ में बाध है।
(2) लक्ष्यार्थ का मुख्यार्थ से सम्बन्ध –
मुख्यार्थ में बाध उपस्थित होने पर लक्ष्यार्थ ग्रहण किया जाता है, लेकिन लक्ष्यार्थ का मुख्यार्थ से सम्बन्ध होना आवश्यक है। इसी को मुख्यार्थ का योग कहते हैं। जैसे —"गंगा पर घर है" वाक्य में 'गंगा पर' का लक्ष्यार्थ 'गंगा के तट पर' लिया जाता है।
(3) लक्ष्यार्थ के मूल में रूढ़ि या प्रयोजन का होना –
लक्ष्यार्थ ग्रहण के मूल में कोई रूढ़ि या प्रयोजन होना आवश्यक है। रूढ़ि का अर्थ है—प्रचलन या प्रसिद्धि। प्रयोजन का आशय है—फल–विशेष या उद्देश्य। जैसे –
फूली सकल मन कामना लूट्यौ अनगिनत चैन।
आजु अचै हरिरूप सखि भये प्रफुल्लित नैन॥
प्रस्तुत पद्यांश में 'मनोकामना' कोई वृक्ष नहीं है कि वह फूले–फले और चैन यानी आनन्द कोई धन–सम्पत्ति नहीं है कि वह लूटा जा सके। श्रीकृष्ण का रूप कोई पेय पदार्थ नहीं है कि उसका आचमन किया जाये। इस प्रकार मुख्यार्थ बाध करके उसके सहयोग से इसका अर्थ लक्ष्यार्थ में ग्रहण किया जाता है।

किसी भी शब्द से लक्षणा द्वारा लक्षित अर्थ या तो रूढ़ि के कारण निकलता है या किसी प्रयोजन के कारण। अतः लक्षणा के मुख्य दो भेद होते हैं—

(1) रूढ़ि लक्षणा –
जहाँ रुढ़ि या रचनाकारों की परम्परा के अनुसार मुख्य अर्थ छोड़कर कोई दूसरा अर्थ लिया जाता है, अर्थात् मुख्य अर्थ में बाधा उपस्थित होने पर लक्ष्यार्थ लिया जाता है, वहाँ पर रूढ़ि लक्षणा मानी जाती है। जैसे—"कलिंग साहसी है।" इस वाक्य में 'कलिँग' एक भूभाग या देश का नाम होने से उसका मुख्यार्थ बाधित हो रहा है, क्योंकि देश अचेतन होने से साहसी नहीं हो सकता। इसलिए लक्षणा से यहाँ 'कलिँग देश के निवासी' अर्थ लिया जाता है। इसी प्रकार कुशल, लावण्य, प्रवीण आदि शब्द भी रूढ़ि लक्षणा से अर्थ प्रकट करते हैं।

(2) प्रयोजनवती लक्षणा –
मुख्यार्थ के बाधित होने पर किसी प्रयोजन के द्वारा अर्थ ग्रहण होने पर प्रयोजनवती लक्षणा होती है। जैसे—"गंगा पर बस्ती है।" गंगा की धारा पर बस्ती नहीं ठहर सकती, इसलिए मुख्यार्थ का बाध होने पर उसके सहयोग से लक्ष्यार्थ बनता है—"गंगा तट पर बस्ती है।" इसका प्रयोजन गंगा–तट को अतिशय निकट, शीतल और पवित्र बतलाना है।

"चौपड़ पर फूलमाली बैठे हैं।" वाक्य में, चौपड़ के मध्य में फव्वारा या दूब आदि की सजावट होती है, उस जगह पर फूलमाली नहीं बैठ सकते, अतः समीप के सम्बन्ध से चौपड़ के पास की जमीन या फुटपाथ पर फूलमाली बैठे हैं, यह अर्थ प्रयोजनवती लक्षणा से निकलता है।

विद्वानों ने लक्षणा के—उपादान लक्षणा, लक्षणलक्षणा, शुद्धा, गौणी, सारोपा, साध्यवसाना आदि विविध भेदोपभेद माने हैं। आचार्य मम्मट ने इसके प्रमुख छः भेद माने हैं, जबकि विश्वनाथ ने 'साहित्यदर्पण' में इसके अस्सी भेद बताये हैं।

3. व्यंजना शक्ति –
जब वाक्य का सामान्य या अमुख्य अर्थ अभिधा और लक्षणा शब्द–शक्ति से नहीं निकलता है, तब उसका कोई विशिष्ट अर्थ या चमत्कारी व्यंग्यार्थ जिस शक्ति से व्यक्त होता है, उसे व्यंजना शक्ति कहते हैं।

व्यंजना के उदाहरण—
(1) तू ही साँच द्विजराज है, तेरी कला प्रमान।
तो पर सिव किरपा करि जान्यौ सकल जहान॥

प्रस्तुत दोहे में कोई चन्द्रमा को सम्बोधित करके कह रहा है—"हे चन्द्रमा! तू ही सच्चा द्विजराज है, तेरी ही कला सार्थक है। सारा संसार जानता है कि शिवजी ने तेरे ऊपर कृपा की है।"

यहाँ पर द्विजराज, कला और शिव में श्लिष्टार्थ लगाने पर भिन्न अर्थ की प्रतीति होती है, अर्थात् शिवाजी ने भूषण की कविता पर प्रसन्न होकर उन्हें दान दिया। यहाँ यह व्यंग्यार्थ भी निकल आता है।

(2) किसी ने अपने साथी से कहा—"संध्याकाल के छः बज गये हैं।"
इस वाक्य में 'छः बजे' के अनेक अर्थ लिये जा सकते हैं, जैसे– कोई अर्थ लेगा कि अब घर जाना चाहिए, कोई स्त्री अर्थ लेगी कि गाय को दुहने का समय हो गया है, कोई भक्त अर्थ लेगा कि मन्दिर में आरती का समय हो गया है। इसी प्रकार अनेक अर्थ लिये जा सकते हैं।

(3) प्राकृतिक सुषमा में कमल तो कमल है।
इस वाक्य में प्रथम 'कमल' शब्द का अर्थ सामान्य रूप से कमल है, परन्तु द्वितीय 'कमल' शब्द का अर्थ 'सौन्दर्यातिशय (सबसे सुन्दर)' है।

(4) कोयल तो कोयल ही है।
इस वाक्य मे प्रथम 'कोयल' का अर्थ सामान्य कोयल है जबकि द्वितीय 'कोयल' शब्द का विशिष्ट अर्थ है– सब पक्षियों में ज्यादा मधुर कूकने वाली।

(5) सुरेश के चेहरे पर बारह बजे हैं।
सुरेश का चेहरा कोई घड़ी नहीं है, फिर उस पर बारह कैसे बज सकते हैं? इसका व्यंग्यार्थ यह है कि उसके चेहरे पर एकदम उदासी छा गई है।

(6) किसी चोर को डाँटते हुए थानेदार ने कहा कि तो तुम धन्ना सेठ हो?
इस वाक्य में चोर को डाँटने के लिए थानेदार ने उसका उपहास करते हुए यह कहा है। चोर धन्ना सेठ कहाँ से हो सकता है?

व्यंजना शक्ति के द्वारा निकलने वाले अर्थ को प्रतीयमानार्थ, गम्यार्थ, अन्यार्थ, व्यंग्यार्थ एवं ध्वन्यर्थ भी कहते हैं। व्यंग्यार्थ को व्यक्त करने वाला शब्द 'व्यंजक' कहलाता है। अभिधा और लक्षणा केवल अर्थ बतलाकर शांत हो जाती हैं, परन्तु व्यंजना काव्य–रचना के मूल स्वरूप को अथवा उसके उद्देश्य को व्यक्त करती है। व्यंजना के आधार पर ही किसी काव्य को उत्तम, मध्यम और अधम माना जाता है। इस प्रकार विशेष अर्थ निकालने वाली व्यंजना अन्तिम शब्द–शक्ति मानी जाती है।

♦ व्यंजना के भेद –
व्यंजना शब्द और अर्थ दोनों में रहती है, इस कारण इसके दो प्रमुख भेद हैं—शाब्दी व्यंजना और आर्थी व्यंजना।

(1) शाब्दी व्यंजना –
जहाँ व्यंजना शक्ति से व्यक्त हुआ व्यंग्यार्थ किसी विशेष शब्द के प्रयोग पर आश्रित रहता है, वहाँ शाब्दी व्यंजना होती है। अनेकार्थवाची शब्दों के प्रयोग में शाब्दी व्यंजना होती है, लेकिन इसमें शब्दार्थ नियन्त्रित रहता है। जैसे –
चिरजीवौ जोरी जुरै, क्यों न सनेह गम्भीर।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के बीर॥
इस पद्यांश में आये 'वृषभानुजा' और 'हलधर' शब्द के अनेक अर्थ हैं, परन्तु यहाँ पर अर्थ नियन्त्रित होकर क्रमशः 'राधा' और 'कृष्ण' अर्थ लिया गया है।

(2) आर्थी व्यंजना –
जहाँ व्यंजना शक्ति से व्यक्त हुआ व्यंग्यार्थ केवल अर्थ पर ही आश्रित रहता है, वहाँ आर्थी व्यंजना होती है। जैसे –
सूर्य अस्त होने वाला है।
इसमें अभिधा से केवल 'सूर्यास्त होना' मुख्य अर्थ निकलता है, जबकि वक्ता, श्रोता या प्रकरण आदि के आधार पर इसके ये भिन्न–भिन्न व्यंग्यार्थ निकलते हैं—गाय दुहने का समय हो गया। दीपक जलाने का समय हो गया। अब घर चलना चाहिए। कार्यालय का समय समाप्त हो गया। मित्र से मिलने का समय आ गया, इत्यादि। इसी प्रकार—
'बाल मराल कि मन्दर लेही।'
इसका मुख्यार्थ है—छोटा हंस मन्दराचल को कैसे उठा सकता है? जबकि धनुष–यज्ञ के प्रकरण के अनुसार इसका व्यंग्यार्थ होता है—क्या नवयुवक श्रीराम भारी शिव–धनुष को नहीं उठा सकते? इसमें काकु से व्यंग्यार्थ निकला है और यह अर्थ के सहारे व्यक्त हुआ है।

♦♦♦

« पीछे जायें | आगे पढ़ें »

• सामान्य हिन्दी
♦ होम पेज

प्रस्तुति:–
प्रमोद खेदड़